International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 09-11-2019; Accepted: 12-11-2019
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 1; January 2020; Page No. 28-30

भाषा का उद्‌भव और विकास

डॉ. विजय कुमार
नेट, पीएच.डी (वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा), बिहार, भारत

प्रस्तावना

मानव सभ्यता के विकास में भाषा का महत्त्वपूर्ण योगदान है। भाषा के कारण ही मनुष्य इतनी प्रगति कर सका है। भाषा का विकास नहीं हुआ होता तो संभवतः आज भी मनुष्य पशुओं के समकक्ष ही होता। आज ये जान लेना भी आवश्यक है कि भाषा का विकास कब से हुआ है और किस प्रकार से हुआ है। किसी भी भाषा मे ध्वनि का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। भाषा का पूर्व रूप ध्वनी ही है। जब हम आदि मानव की कल्पना करते हैं तो स्पष्ट पता चलता है कि आदि मानव उस समय ध्वनि संकेतों के व्दारा ही एक दूसरे से बात करता होगा। पशु–पक्षियों में ये ध्वनि संकेत आज भी देखे जाते है। मनुष्य ने ही सबसे पहले ध्वनि संकेतों को शाब्दिक रूप देना शुरू किया। हम संस्कृत को देव भाषा के रूप में जानते हैं। एक मान्यता के अनुसार संस्कृत देवों की भाषा थी। यह मानकर संस्कृत को आज भी भाषाओं में सबसे अधिक सम्मान दिया जाता है।

''प्राचीन आर्यों की भाषा के लिखित रूप का परिचय ऋग्वेद में मिलता हैं। ऋग्वेद के मंत्रों की रचना भिन्न–भिन्न समयों में हुई है। कालांतर में सब मंत्रों का संपादन करके उनका क्रम लगाया गया। परंतु इस कम योजना में रचना–काल और रचना–स्थान का ध्यान नहीं रखा गया। फिर भी ऋग्वेद से इतना तो निश्चित होता हैं कि प्राचीन समय में जब आर्य सप्त सिंधु प्रदेश में थे तभी उनकी बोलचाल की भाषा ने कुछ–कुछ साहित्यिक रूप से इतना तो निश्चित होता है कि प्राचीन समय में जब आर्य सप्त सिंधु प्रदेश में थे तभी उनकी बोलचाल की भाषा ने कुछ–कुछ साहित्यिक रूप धारण कर लिया था, उसी का प्रयोग ऋग्वेद में मिलता है। भाषा–शास्त्रियों ने इस प्रकार की भाषा को वैदिक भाषा नाम दिया है। ज्यों–ज्यों आर्यगण अपने मूलस्थान को छोडकर अन्यत्र फैलने लगे और तत्कालीन अनार्यो से संपर्क बढाने लगे, त्यों–त्यों उनकी भाषा भी विशुद्‌ध न रहकर मिश्रित होने लगी। विभिन्न स्थानों के आर्य विभिन्न प्रकार के प्रयोग व्यवहार में लाने लगे। इनसे विषमता दूर हुई। स्थिति यहॉ तक पहुँची कि एक स्थान के आर्य दूसरे स्थान के आर्यो की बोली को समझने में कठिनता अनुभव करने लगे। तब उन लोगों ने मिलकर भाषा को टकसाली रूप देने का प्रयास किया और इसी रूप का नाम संस्कृत रखा गया।'' 1

निश्चित ही मनुष्य की भाषा में वह खूबी रही होगी जिससे भाषा का निरंतर विकास होता रहा होगा। यह भी विचार करने योग्य है कि संस्कृत से पहले क्या स्थिति रही होगी। क्या आदि मानव की भाषा अन्य पशुओं की अपेक्षा उच्च गुणवत्ता वाली होगी? बिलकुल। तभी तो वह इतना आगे निकल पाया। यदि आज गूँगे लोगों का समाज अलग से बना दिया जाए और उतनी ही संख्या में बोलने वालों को भी अलग कर दिया जाए और दोनों ही पक्षों के लोगों को जीने के समान संसाधन उपलब्ध करा दिए जाएँ तो हम पाएँगे कि बोलने वाला पक्ष समाज में जल्दी उन्नति कर पा रहा है और इसका एकमात्र कारण है – भाषा। भाषा का विकास जितनी देर से हुआ है उतना ही अधिक समय मनुष्य को अपनी प्रगति करने में भी लगा है। जैसे सन–1857 की क्रांति अगर सफल हो गई होती और हमारा देश पहले ही आजाद हो गया होता तो हमारा देश आज और अधिक विकास कर चुका होता ठीक वैसे ही यदि भाषा का विकास भी पहले हुआ होता तो आज विश्व की प्रगति दो कदम और आगे होती। भाषा को परिवर्तनशील माना गया है। जिस प्रकार से दुनिया की प्रत्येक वस्तु परिवर्तित होत जाती है, ठीक उसी प्रकार से भाषा भी सदैव एक समान नहीं रहती है। उसमें भी समय के साथ परिवर्तन हो ही जाता है। आज जिस हिंदी का रूप हम लोग देख रहें हैं वो आदि काल में नहीं था और न ही वह भक्तिकाल या रीतिकाल में था। यह भी सच है कि आज से सौ वर्षो के बाद आज की भाषा का भी एक अलग ही रूप देखने को मिलेगा।

''जब हम भाषा की उत्पत्ति के संबध में बात करते हैं तो स्वभावतः पहला प्रश्न यह उठता है कि भाषा की उत्पत्ति कैसे हुई? इस प्रश्न पर विचार करना अत्यंत प्राचीन काल से होता आया है, पर अब भाषाविज्ञानवेत्ता इस प्रश्न को भाषाविज्ञान के क्षेत्र का नहीं मानते। कोई इसे मानवविज्ञान का मानता है तो, कोई प्राचीन इतिहास का। कुछ लोग ऐसे भी है जो कहते हैं कि भाषाविज्ञान एक विज्ञान है, अतएव यह भाषा विज्ञान का अंग नहीं माना जा सकता। इन्हीं सब बातों के कारण अब से लगभग सवासदी वर्ष पूर्व पेरिस मे जब भाषा विज्ञान परिषद की स्थापना की गई तब संस्थापकों ने परिषद के परिनियमों में स्पष्ट शब्दों में भाषा की उत्पत्ति आदि पर विचार आदि करने पर प्रतिबंध लगा दिया, और इस प्रश्न को सदा सर्वदा के लिए भाषा विज्ञान से निकाल देने का प्रयास किया। उसके बाद भी अन्य अनेक विद्‌वानों ने इस प्रकार के मत व्यक्त किये और आज तो प्रायः सभी मुर्धन्य विद्‌वान एक मत से सहमत हैं कि इस प्रश्न का स्थान भाषा विज्ञान में नही है। किन्तु इस प्रतिबंध और उपेक्षा के बावजूद भी इन बीच के वर्षो में यह प्रश्न बार–बार उठाया गया है और यह कहना भी अनुचित न होगा कि न केवल उठाया गया है अपितु प्रायः हर दशक में एक दो नये सिद्‌धांत या पुराने सिद्‌धांतों की नवीन व्याख्याएँ हमारे सामने रखी जाने लगी हैं। बात बडी सीधी है। जब भाषा विज्ञान भाषा का विज्ञान हैं तो निश्चय ही भाषा का पुरा इतिहास और उसका हर रूप भाषा विज्ञान के अध्ययन का हिस्सा है। ऐसी स्थिति में भाषा की उत्पत्ति और उसके प्रारंभिक रूप के अध्ययन को निश्चय ही इससे अलग नहीं किया जा सकता है। और यह तर्क कि विचार करने के लिए सामग्री का अभाव है अतः उसे विषय से अलग मान लिया जाएगा कोई तर्क नहीं है। विचार करते रहने से तो अच्छा हैं इस दिशा में हम कुछ आगे बढते रहें.... जैसा कि मनोविज्ञानवेत्ता कर रहे हैं... किंतु छोड देने पर तो यह प्रश्न जहॉ का तहॉ ही पडा रह जाएगा। '' 2

क्या सृष्टि के आरम्भ मे कोई भाषा थी? यदि हॉ तो कौन.सी और यदि नहीं तो फिर मनुष्य उस समय अपनी भावनाओं को किस प्रकार से व्यक्त करता था। यह माना गया है आरम्भ में सांकेतिक भाषा रही होगी। लेकिन मै समझता हूँ कि सांकेतिक भाषा तो

बाद में आई होगी पहले पहल तो मनुष्य ने मुॅह से कुछ न कुछ आवाज जरूर निकाली होगी। आगे चलकर उसकी यही आवाज भाषा के रूप में परिवर्तित हो गई। इसका अर्थ यह हुआ कि हाथों के संकेत से पहले ध्वनि संकेत मिलने शुरू हो चुके होंगे और इन्हीं संकेतों के आधुनिक रूप को हम आजकल की भाषा के रूप में देखते हैं। इसका अर्थ यह है कि भाषा की शुरूआत मनुष्य के भीतर से निकले वाली ध्वनियों से हुई है। पशुओं के लिए तो यह बात पहले से ही मान्य हैं कि उनकी ध्वनियॉ ही भाषा रही। कुछ विद्वान मानते हैं कि पशुओं की भाषा सार्थक नहीं कही नही जा सकती है किंतु यहॉ पर मेरा मानना है कि यह कोई आवश्यक नहीं कि जो भाषा हमारे लिए सार्थक नहीं है वह किसी और के लिए भी सार्थक नहीं हो सकती है। जैसे कुत्तों की भाषा की सार्थकता हमारे लिऐ भले ही सार्थक न हो किंतु यह भाषा कुत्तों के लिए तो सार्थक है ही क्योंकि वे उसी भाषा में अपना विचार विनिमय करते हैं। ठीक उसी प्रकार मनुष्य चाहें कितनी ही अच्छी हिंदी बोलता हो, अंग्रेजी बोलता हो या अन्य कोई भाषा बोलता हो किंतु उसकी यह बेहतरीन भाषा जानवरों और पक्षियों के लिए निरर्थक है। इसका अर्थ सीधे–सीधे भाषा के अर्थ से है। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि जब तक हमें कोई शब्द या भाषा या उसका अर्थ समझ मे नहीं आता तब तक हमारे लिए वह भाषा निरर्थक ही है। एक ऐसा मनुष्य जो जर्मन या चीनी भाषा नहीं जानता हैं और उसके समक्ष इन्हीं भाषांओं में चाहे कितनी ही अच्छी कविता या कहानी सुनाई जाए उसके लिए व व्यर्थ ही है।

''भाषा की उत्पत्ति का अर्थ बोलने की शक्ति की उत्पत्ति न होकर ध्वनि तथा अर्थ के परस्पर संसर्ग से है। कोयल कूहू–कूहू और कौआ कॉव–कॉव करता है। परंतु इन ध्वनियों में सार्थकता का अभाव है। अतः इन्हें भाषा की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। मनुष्य मे भी पशु पक्षियों के समान ध्वनन शक्ति तो आदिकाल से रही होगी। अतः उसकी उत्पत्ति पर विचार करने का प्रश्न ही नही उठता है। वस्तुतः ध्वनि और संसर्ग स्थापन ही मान की चरम उपलब्धि है। मानव ने ध्वनि के साथ अर्थ का संयोग करना कब सीखा इसके लिए दार्शनिक इतिहासज्ञों मानविज्ञानियों तथा भाषा विज्ञानियों ने अनेक तर्क प्रस्तुत किये किन्तु ये सारे के सारे सिद्धांत अनुमान पर ही आधारित हैं और इनसे प्रश्न का पूर्ण और संतोषप्रद उत्तर नहीं मिलता ।।''

भाषा की उत्पत्ति को लेकर अनेक मत दिए गये हैं लेकिन सबसे पहले तो हम लोग यही मान लेते हैं कि भाषा प्रत्येक जीव को उसके जन्म के साथ ही प्राप्त हो जाती है। मनुष्य ही नही, दुनिया का कोई भी प्राणी जन्म के साथ ही भाषा भी लाता है और उसी भाषा में सम्पर्क साधता है। धीरे–धीरे उनकी भाषा विकास करने लगती है या यूॅ कहें कि उसमे बदलाव आने लगता है और फिर भाषा का रूप बदल जाता है।

''ईसवीं शताब्दी से लगभग दो ढाई हजार वर्ष पहले एक ऐसी भाषा रही होगी जो ऋग् वैदिक संस्कृत लोक भाषा से पहले की लोक भाषा रही होगी जिसका नाम छंद या विरोस दिया गया है। क्योंकि वही छांदस भाषा ही वैदिक साहित्य में प्रयुक्त होने पर वैदिक भाषा कहलाई। वैदिक संस्कृत का प्राचीन रूप संसार की प्राचीनतम् पुस्तक ऋग्वेद में मिलता है। इस वैदिक भाषा पर व्याकरण के कठोर बंधन नहीं थे। इसी कारण एक ही शब्द के कई रूप थे जैसे छुद्रक और छुल्लक पश्चात् और पाश्चात् देवैः तथा देवेभिः अस्मान् तथा नः इत्यादि। वैदिक संस्कृत भाषा को कुछ विद्वानों ने प्राकृत भी माना। कालांतर में वैदिक भाषा का व्याकरण के नियमों के अनुसार मानकीकरण किया गया अर्थात वैदिक भाषा का संस्कार या परिष्कार करके संस्कृत भाषा का अविर्भाव हुआ और साहित्य की रचना संस्कृत में होने लगी। संस्कृत भाषा को पूर्ण व्याकरणिक नियमों से जकड कर बंद करने से संस्कृत केवल विशिष्ट जनों की भाषा बनकर ही रह गई और इस प्रकार संस्कृत से पाली और प्राकृत भाषा का विकास हुआ जिसमें संस्कृत भाषा के कठोर व्याकरणिक नियमों को सरल बनाकर महात्मा बुद्ध ने अपने साहित्य का माध्यम बनाया। कुछ विद्वानों ने पाली को ही प्रथम प्राकृत माना है परंतु अधिकांश विद्वान बौद्ध धर्म के साहित्य में प्रयुक्त भाषा को पाली ही कहते है। आगे चलकर पाली का विकास प्राकृत मे हुआ। प्राकृत में लोगों की स्वाभाविक भाषा के तथा फिर साहित्यिक भाषा के पॉच रूप विकसित हुए जो प्रांतीय क्षेत्रों के नामानुसार महाराष्ट्री, शौरसेनी मागधी, अर्ध मागधी तथा पैशाची नाम से जाने गए। महाराष्ट्री प्राकृत का क्षेत्र देश का राष्ट्रीय व्यापक क्षेत्र था। शौरसेनी का क्षेत्र मध्यदेशीय अर्थात ब्रजमंडल तथा राजस्थान था संस्कृत नाटकों में स्त्री पात्र शौरसेनी प्राकृत का प्रयोग करते दिखाई गए है। मागधी प्राकृत का क्षेत्र मगध प्रांत था। अर्ध मागधी का क्षेत्र कोसल अथवा अवध प्रांत था। पैशाची प्राकृत का प्रयोग भारत के उत्तर पश्चिम भागों में होता रहा। आगे प्राकृतों का विकास अपभ्रंशो से हुआ, अपभ्रंश नाम इसलिए दिया गया क्योंकि अपभ्रंशों पर व्याकरण के बंधनों में जकडने का प्रयास हुआ। गुजरात के जैन आचार्य हेमचंद ने अपभ्रंश भाषा का व्याकरण बनाया। आगे चलकर अपभ्रंशो सें ही भारतीय भाषाओं का विकास हुआ। शौरसेनी अपभ्रंश से पुरानी हिंदी, डिंगल, पिंगल, ब्रज, राजस्थानी, पंजाबी, हरियाणवी, कौरवी आदि भाषाओं का विकास हुआ है। अपभ्रंशों को मुख्य रूप से तीन वर्गो में बॉटा गया है।

नागर – उपनागर तथा ब्राचड प्राचीन हिन्दी को विद्यापति ने देसी भाषा या अवहट्ट भी कहा है। में प्राचीन हिंदी से ही आधुनिक खडी बोली का विकास हुआ हैं जिसका साहित्यिक और मानक रूप आज भारत की राष्ट्रभाषा तथा उत्तरी भारत के राज्यों की भाषा है।'' 4

वास्तव में भाषा नदी के उद्गम की भॉति है। पहाडों से निकलने के बाद नदी जिस प्रकार के आगे की ओर बढने लगती है ठीक उसी प्रकार से भाषा भी अपनी गति पकड लेती है। नदी के जल में अनेक वस्तुऍ उसके साथ बहती चली जाती है। एक बात बति पकड लेने के बाद नही रूकती नही और निरंतर अपने गंतव्य की ओर बढती चली जाती है। ठीक उसी प्रकार से भाषा भी अपने साथ अनेक प्रांतो की भाषा की सुगंध को बहाते हुए आगे की ओर बढ चलती है। कुछ लोग अज्ञान वश इस प्रकार से भाषा को अशुद्ध कहने लगते हैं लेकिन उन्हें सोचना चाहिए कि कोई गतिमान भाषा अशुद्ध कैसे हो सकती है। क्या बहता हुआ जल दुषीत होता है? नहीं, वह तो स्वच्छ और निर्मल कहलाता है। प्राचीन काल से लेकर अब तक जिस प्रकार से भी भाषा का विकास हुआ वह अपने आप में एक जीवंत शक्ति लिए हुए है। आज उन प्राचीन भाषाओं का ही बदला हुआ रूप हमारे सामने आ चुका है। जो भाषा लोगों को सरल लगती है वे उसी भाषा को प्रयोग में लाने लगते हैं। इतना ही नहीं तो यह भी कि उस भाषा के बहुत से कठिन शब्दों को लोग सरल रूप भी देनें लग जाते हैं। जैसे यदि किसी का नाम जितेंद्र हैं तो उसे 'जीतू' कहने लग जाते है, विजय को 'विजू, संजय को 'संजू' और न जाने अन्य कितने ही नामों को लोक अपनी सुविधा अनुसार आसान सा रूप देने में लग जाते है। इसी प्रकार पूरा नाम न लेकर केवल उपनाम से भी पुकारने का प्रयोग चल पडा है। जैसे गजानन माधव 'मुक्तिबोध' को मुक्तिबोध और सच्चिदानन्द हीनानन्द वात्सायन 'अज्ञेय'को अज्ञेय कहने की परंपरा चल पडी है। प्रसाद जी, शर्मा जी, दूबे जी, मिश्रा जी आदि अनेक उदाहरण देखे जा सकते है। हिन्दी की स्थानिय बोलियों में भी यह बहुत अधिक देखा जा सकता है।

''हिन्दी जिस भाषा के विशिष्ट दैशिक और कालिक रूप का नाम है भारत में उसका प्राचीनतम् रूप संस्कृत है। संस्कृत का काल मोटे रूप से 1500 ई.पू. से 500 ई.पू. तक माना जाता है। इस

काल में संस्कृत बोलचाल की भाषा थी। उस बोलचाल की भाषा का ही शिष्ट और मानक रूप संस्कृत वांड्मय में प्राप्त हुआ है। संस्कृत भाषा के भी दो रूप मिलते है। एक भाषा वैदिक संस्कृत है जिसमें संस्कृत वांड्मय की रचना हुई है और दूसरी लौकिक संस्कृत या क्लासिकल संस्कृत है जिसमें वाल्मिकी, व्यास, भास, अश्वघोष, कालिदास आदि की रचनाएँ हैं। इस संस्कृत काल के अंत तक मानक या परिनिष्ठित भाषा तो एक थी किंतु क्षेत्रीय तीन बोलियॉ विकसीत हो चली थी जिन्हे पश्चिमोत्तरी मध्यदेशी और पूर्वी के नाम से अभीहीत किया जा सकता है। संस्कृत कालीन बोलचाल की भाषा विकसित होते होते 500 ई.पू. के बाद प्रवृतितः बदल गयी जिसे पाली की संज्ञा दी गई। इसका काल 500 ई.पू. से पहली ईस्वी तक है। बौद्ध धर्म ग्रंथों मे पाली का जो रूप मिलता है वह इस बोलचाल की भाषा का ही शिष्ट और मानक रूप था। इस काल में क्षेंत्रीय भाषाओं की संख्या चार हो गई थी : पश्चिमोत्तरी, मध्यदेशी, पूर्वी और दक्षिणी।''5

किसी भाषा या बोली के रूप का सबसे अधिक महत्वपूर्ण हो जाना इस बात पर निर्भर करता है कि आज के समय में उसके बोलने वालों की संख्या कितनी है और उसका महत्त्व कितना है। अंग्रेजी को लोग आज हिंदी से अधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं जिसका एक कारण यह भी है कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उसका महत्त्व दिन प्रतिदिन बढता ही चला जा रहा हैं। लेकिन जब हम बात हिंदी की करने लगते हैं तो कि हिंदी की बोलियों या उपभाषाओं में कौन सी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं तो हमें पता चलता हैं कि यह इस बात पर निर्भर करता हैं कि उस बोली का क्षेत्र कितना अधिक है। बिहार की बोलियों में भोजपुरी का क्षेत्र अधिक होने के कारण इस बोली की लोकप्रियता भी उतनी ही अधिक दिखाई देती है।

''हिन्दी के दोन रूप है– पश्चिमी हिंदी और पूर्वी हिंदी। पूर्वी हिंदी का संबंध अर्धमागधी से हैं तथा पश्चिमी हिंदी का संबंध शौरसेनी अपभ्रंश से है। इन दोनों हिंदी के रूपो में पश्चिमी हिंदी का महत्त्व अधिक रहा है। साहित्यिक और सामाजिक दोनों दृष्टियों से यह प्रमुख रही है। इसके महत्त्व के कारण इसकी मध्यदेशीय परंपरा हैं क्योंकि मध्यदेशीय संस्कृत, पाली, शौरसेनी, प्राकृत तथा अपभ्रंश में अवधी भाषा का महत्त्व अधिक है और पश्चिमी में ब्रजभाषा खडीबोली का साहित्यिक महत्त्व है।'' 6

निष्कर्ष के रूप में इतना ही कहा जा सकता हैं कि भाषा का इतिहास बहुत ही पुराना है आज के समय तक पहुॅचते–पहुॅचते हिन्दी ने स्वयं को विश्व स्तर का बना लिया है। आज हिन्दी विश्व की दूसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा बन चुकी है। विश्व के कोने–कोने में यह भाषा बोली जाने लगी है। अनेक स्थानों पर तो विदेशी छात्र भी हिन्दी सीख रहे हैं। भारत में लगभग सभी तबकों के लोग इस भाषा को सीख रहे हैं। भारतीय सिनेमा जगत में भी हिन्दी के विकास के लिए कोई कसर नहीं छोडी है। आज 70 से 85 प्रतिशत चैनलों की कमाई हिन्दी से ही संभव हो पा रही है। बॉलीवूड की लगभग सभी फिल्में हिन्दी में ही बनकर तैयार हो रही हैं। ये दूसरी बात है कि इन फिल्मों में किरदारों के नाम अंग्रेजी में लिखकर आते हैं किन्तु संवाद हिन्दी में लिखे जाते हैं। राजनेताओं को देश की सामान्य जनता के सामने हिन्दी में ही भाषण देना पडता है। अनेक वेबसाईट हिन्दी में उपलब्ध हो चुके हैं। इसलिए भारत के संपूर्ण विकास के लिए हिन्दी को पूरी तरह से अपना लेने में ही समझदारी है।

संदर्भ सूची

1. भाषा विज्ञान एवं हिन्दी भाषा
2. डॉ. रामचंद्र वर्मा शास्त्री – माया अग्रवाल पृष्ठांक 106
3. भाषा विज्ञान
4. डॉ. भोलानाथ तिवारी, किताब महल, पृष्ठांक 40, सत्तावनवा संस्करण
5. 3. भाषा विज्ञान एवं हिन्दी भाषा
6. डॉ. रामचंद्र वर्मा शास्त्री – माया अग्रवाल पृष्ठांक 24
7. 4. हिन्दी साहित्य का इतिहास
8. डॉ. जय नारायण वर्मा के.एल – पचौरी प्रकाशन, पृष्ठांक 1
9. 5. हिन्दी साहित्य का इतिहास
10. डॉ. नगेंद्र, मयूर पेपर बैंक्स, पृष्ठांक 6
11. 6. हिन्दी साहित्य का इतिहास
12. डॉ. नगेंद्र, मयूर पेपर बैंक्स, पृष्ठांक 21